वैशाली-गणतन्त्र का इतिहास

□ श्री राजमल जैन

सहायक निदेशक,

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय,

(वेस्ट ब्लाक ७, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली ११००२२)

वैशाली-गणतन्त्र के वर्णन के बिना जैन राजशास्त्र का इतिहास अपूर्ण ही रहेगा। वैशाली-गणतन्त्र के निर्वाचित राष्ट्रपति ('राजा' शब्द से प्रसिद्ध) चेटक की पुत्री त्रिशला भगवान् महावीर की पूज्य माता थी। (श्वेताम्बर-परम्परा के अनुसार त्रिशला चेटक की बहन थी)। भगवान् महावीर के पिता सिद्धार्थ वैशाली के एक उपनगर 'कुण्डग्राम' के शासक थे। अतः महावीर भी 'वैशालिक' अथवा 'वैशालीय' के नाम से प्रसिद्ध थे। भगवान् महावीर ने संसार-त्याग के पश्चात् ४२ चातुर्मासों में से छः चातुर्मास वैशाली में किये थे। कल्पसूत्र (१२२) के अनुसार महावीर ने बारह चातुर्मास वैशाली में व्यतीत किये थे।[1]

महात्मा बुद्ध एवं वैशाली

इसका यह तात्पर्य नहीं कि केवल महावीर को ही वैशाली प्रिय थी। इस गणतन्त्र तथा नगर के प्रति महात्मा बुद्ध का भी अधिक स्नेह था। उन्होंने कई बार वैशाली में विहार किया था तथा चातुर्मास बिताए। निर्वाण से पूर्व वैशाली पर दृष्टिपात किया और अपने शिष्य आनन्द से कहा, "आनन्द! इस नगर में यह मेरी अन्तिम यात्रा होगी।[2]" यहीं पर उन्होंने सर्वप्रथम भिक्षुणी-संघ की स्थापना की तथा आनन्द के अनुरोध पर गौतमी को अपने संघ में प्रविष्ट किया। एक अवसर पर जब बुद्ध को लिच्छवियों द्वारा निमन्त्रण दिया गया तो उन्होंने कहा—"हे भिक्षुओ! देव-सभा के समान सुन्दर इस लिच्छवि परिषद् को देखो।"[3]

महात्मा बुद्ध ने वैशाली-गणतन्त्र के आदर्श पर भिक्षु-संघ की स्थापना की। "भिक्षु-संघ के छन्द (मत-दान) तथा दूसरे प्रबन्ध के ढंगों में लिच्छवि (वैशाली) गणतन्त्र का अनुकरण किया गया है।' (राहुल सांकृत्यायन—पुरातत्त्व-निबन्धावली, पृ० १२)। यद्यपि बुद्ध शाक्य-गणतन्त्र से सम्बद्ध थे (जिसके अध्यक्ष बुद्ध के पिता शुद्धोदन थे),

---

१. मुनि नथमल (युवाचार्य महाप्रज्ञ), श्रमण महावीर, पृ० ३०३.

२. इदं पच्छिमकं आनन्द ! तथागतस्स बेसालिदस्सनं भविस्सति।

३. उपाध्याय श्री मुनि विद्यानन्द-कृत 'तीर्थंकर वर्धमान' से उद्धृत—
यं स भिक्खवे ! भिक्खनं देवा तावतिंसा अदिट्ठा, अलोकेथ भिक्खवे ! लिच्छवनी परिसं, अपलोकेथ। भिक्खवे ! लिच्छवी परिसरं ! उपसंहरथ भिक्खवे। लिच्छवे ! लिच्छवी परिसरं तावतिंसा सदसन्ति॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथापि उन्होंने वैशाली-गणतन्त्र की पद्धति को अपनाया। हिन्दू राजशास्त्र के विशेषज्ञ श्री काशीप्रसाद जायसवाल के शब्दों में "बौद्ध संघ ने राजनैतिक संघों से अनेक बातें ग्रहण कीं। बुद्ध का जन्म गणतन्त्र में हुआ था। उनके पड़ौसी गणतन्त्र संघ थे और वे उन्हीं लोगों में बड़े हुए। उन्होंने अपने संघ का नामकरण भिक्षुसंघ अर्थात् भिक्षुओं का गणतन्त्र किया। अपने समकालीन गुरुओं का अनुकरण करके उन्होंने अपने धर्म-संघ की स्थापना में गणतन्त्र संघों के नाम तथा संविधान को ग्रहण किया। पालि-सूत्रों में उद्धृत बुद्ध के शब्दों के द्वारा राजनैतिक तथा धार्मिक संघ-व्यवस्था का सम्बन्ध सिद्ध किया जा सकता है।[1] विद्वान् लेखक ने उन सात नियमों का वर्णन किया है जिनका पूर्ण पालन होने पर वज्जि-गण (लिच्छवि एवं विदेह) निरन्तर उन्नति करता रहेगा। इन नियमों का वर्णन महात्मा बुद्ध ने मगधराज अजातशत्रु (जो वज्जिगण के विनाश का इच्छुक था) के मन्त्री के सम्मुख किया था। बुद्ध ने भिक्षु-संघ को भी इन नियमों के पालन की प्रेरणा दी थी।

बौद्ध ग्रन्थ एवं वैशाली

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वैशाली-गणतन्त्र के इतिहास तथा कार्यप्रणाली के ज्ञान के लिए हम बौद्ध ग्रन्थों के ऋणी हैं। विवरणों की उपलब्धि के विषय में ये विवरण निराले हैं। सम्भवतः इसी कारण श्री जायसवाल ने इस गणतन्त्र को 'विवरणयुक्त गणराज्य' (Recorded republic) शब्द से सम्बोधित किया है। क्योंकि अधिकांश गणराज्यों का अनुमान कुछ सिक्कों या मुद्राओं से या पाणिनीय व्याकरण के कुछ सूत्रों से अथवा कुछ ग्रन्थों में यत्र-तत्र उपलब्ध संकेतों से किया गया है। इसी कारण विद्वान् लेखक ने इसे 'प्राचीनतम गणतन्त्र' घोषित किया है, जिसके लिखित साक्ष्य हमें प्राप्त हैं और जिसकी कार्य-प्रणाली की झांकी हमें महात्मा बुद्ध के अनेक संवादों में मिलती है।

वैशाली गणतन्त्र का अस्तित्व कम से कम २६०० वर्ष पूर्व रहा है। २५०० वर्ष पूर्व भगवान् महावीर ने ७२ वर्ष की आयु में निर्वाण प्राप्त किया था। यह स्पष्ट ही है कि महावीर वैशाली के अध्यक्ष चेटक के दौहित्र थे। महात्मा बुद्ध महावीर के समकालीन थे। बुद्ध के निर्वाण के शीघ्र पश्चात् बुद्ध के उपदेशों को लेख-बद्ध कर लिया गया था। वैशाली में ही बौद्ध भिक्षुओं की दूसरी संगीति का आयोजन (बुद्ध के उपदेशों के संग्रह के लिए) हुआ था।[2]

वैशाली गणतन्त्र से पूर्व (छठी शताब्दी ई० पू०) क्या कोई गणराज्य था? वस्तुतः इस विषय में हम अन्धकार में हैं। विद्वानों ने ग्रन्थों में यत्र-तत्र प्राप्त शब्दों से इसका अनुमान लगाने का प्रयत्न किया है। वैशाली से पूर्व किसी अन्य गणतन्त्र का विस्तृत विवरण हमें उपलब्ध नहीं है। बौद्ध-ग्रन्थ 'अंगुत्तर निकाय' से हमें ज्ञात होता है कि ईसा पूर्व छठी शताब्दी से पहले निम्नलिखित सोलह 'महाजन पद' थे—१. काशी, २. कोसल, ३. अंग, ४ मगध, ५. वज्जि (वृजि), ६. मल्ल, ७. चेत्तिय (चेदि), ८. वंस (वत्स) ९. कुरु, १०. पंचाल, ११. मच्छ (मत्स्य), १२. शूरसेन, १३. अस्सक (अश्मक), १४. अवन्ति, १५. गन्धार, १६. कम्बोज। इनमें से वज्जि का उदय विदेह-साम्राज्य के पतन के बाद हुआ।[3]

जैन ग्रन्थ भगवती सूत्र में इन जनपदों की सूची भिन्न रूप में है जो निम्नलिखित है—१. अंग, २. वंग, ३. मगह (मगध), ४. मलय, ५. मालव (क), ६. अच्छ, ७. वच्छ (वत्स), ८. कोच्छ (कच्छ?) ९. पाढ (पाण्ड्य या पौड्र) १०. लाढ (लाट या राट), ११. वज्जि (वज्जि), १२. मोलि (मल्ल), १३. काशी, १४. कोसल, १५. अवाह,

---

१. श्री काशीप्रसाद जायसवाल—'हिन्दू पोलिटी०—पृष्ठ ४० (चतुर्थ संस्करण)।
२. पुरातत्त्व-निबन्धावली—२०.
३. राय चौधुरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ ऐंशियेंट इण्डिया, कलकत्ता विश्वविद्यालय, छठा संस्करण, १९५३, पृ० ९५.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६. सम्मुत्तर (सुम्भोत्तर ?)। अनेक विद्वान् इस सूची को उत्तरकालीन मानते हैं परन्तु यह सत्य है कि उपर्युक्त सोलह जनपदों में काशी, कोशल, मगध, अवन्ति तथा वज्जि सर्वाधिक शक्तिशाली थे।

वैशाली गणतन्त्र की रचना

'वज्जि' नाम है एक महासंघ का, जिसके मुख्य अंग थे—ज्ञातृक, लिच्छवि एवं वृजि। ज्ञातृकों से महावीर के पिता सिद्धार्थ का सम्बन्ध था (राजधानी—कुण्ड-ग्राम)। लिच्छवियों की राजधानी वैशाली की पहचान बिहार के मुजफ्फरपुर जिले में स्थित बसाढ़-ग्राम से की गई है। वृजि को एक कुल माना गया है जिसका सम्बन्ध वैशाली से था। इस महासंघ की राजधानी भी वैशाली थी। लिच्छवियों के अधिक शक्तिशाली होने के कारण इस महासंघ का नाम 'लिच्छवि-संघ' पड़ा। बाद में राजधानी वैशाली की लोकप्रियता से इसका भी नाम वैशाली गणतन्त्र हो गया।

वज्जि एवं लिच्छवि

बौद्ध साहित्य से यह भी ज्ञात होता है कि वज्जि-महासंघ में अष्ट कुल (विदेह, ज्ञातृक, लिच्छवि, वृजि, उग्र, भोग, कौरव तथा ऐक्ष्वाकु) थे। इनमें भी मुख्य थे—वृजि तथा लिच्छवि। बौद्ध-दर्शन तथा प्राचीन भारतीय भूगोल के अधिकारी विद्वान् श्री भरतसिंह उपाध्याय ने अपने ग्रन्थ (बुद्धकालीन भारतीय भूगोल, पृष्ठ ३८३-८४, हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, संवत् २०१८) में निम्नलिखित मत प्रकट किया है—"वस्तुतः लिच्छवियों और वज्जियों में भेद करना कठिन है, क्योंकि वज्जि न केवल एक अलग जाति के थे, बल्कि लिच्छवि आदि गणतन्त्रों को मिलकर उनका सामान्य अभिधान वज्जि (सं० वृजि) था और इसी प्रकार वैशाली न केवल वज्जि संघ की ही राजधानी थी बल्कि वज्जियों, लिच्छवियों तथा अन्य सदस्य गणतन्त्रों की सामान्य राजधानी भी थी। एक अलग जाति के रूप में वज्जियों का उल्लेख पाणिनि ने किया है और कौटिल्य ने भी उन्हें लिच्छवियों से पृथक् बताया है। यूआन चूआङ् ने भी वज्जि (फु-लि-चिह्) देश और वैशाली (फी-शे-ली) के बीच भेद किया है। परन्तु पालि त्रिपिटक के आधार पर ऐसा विभेद करना सम्भव नहीं है। महापरिनिर्वाण-सूत्र में भगवान् बुद्ध कहते हैं,—"जब तक वज्जि लोग सात अपरिहाणीय धर्मों का पालन करते रहेंगे, उनका पतन नहीं होगा।" परन्तु संयुत्त निकाय के कलिंगर सुत्त में कहते हैं, "जब तक लिच्छवि लोग लकड़ी के बने तख्तों पर सोयेंगे और उद्योगी बने रहेंगे; तब तक अजातशत्रु उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकता।" इससे प्रकट होता है कि भगवान् बुद्ध वज्जि और लिच्छवि शब्दों का प्रयोग पर्याय-वाची अर्थ में ही करते थे। इसी प्रकार विनय-पिटक के प्रथम पाराजिक में पहले तो वज्जि प्रदेश में दुर्भिक्ष पड़ने की बात कही गई है (पाराजिक पालि, पृष्ठ १९, श्री नालन्दा-संस्करण) और आगे चलकर वहीं (पृष्ठ २२ में) एक पुत्रहीन व्यक्ति को यह चिन्ता करते दिखाया गया है कि कहीं लिच्छवि उनके धन को न ले लें। इससे भी वज्जियों और लिच्छवियों की अभिन्नता प्रतीत होती है।

विद्वान् लेखक द्वारा प्रदर्शित इस अभिन्नता से मैं सहमत हूँ। इस प्रसंग में 'वज्जि' से बुद्ध का तात्पर्य लिच्छवियों से ही था और इसी आधार पर वज्जि-सम्बन्धी बुद्ध-वचनों की व्याख्या होनी चाहिए।

अन्य ग्रन्थों में उल्लेख

पाणिनि (५०० ई० पू०) और कौटिल्य (३०० ई० पू०) के उल्लेखों से भी वज्जि (वैशाली, लिच्छवि) गणतन्त्र की महत्ता तथा ख्याति का अनुमान लगाया जा सकता है। पाणिनीय 'अष्टाध्यायी' में एक सूत्र है—'मद्रवृज्जयोः कन्' ४।२।३१। इसी प्रकार, कौटिल्य ने 'अर्थशास्त्र' में दो प्रकार के संघों का अन्तर बताते हुए लिखा है—"काम्बोज, सुराष्ट्र आदि क्षत्रिय श्रेणियाँ कृषि, व्यापार तथा शास्त्रों द्वारा जीवन-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यापन करती हैं और लिच्छविक, वृजिक, मल्लक, मद्रक, कुकुर, कुरु, पंचाल आदि श्रेणियाँ राजा के समान जीवन बिताती हैं।[1]

रामायण तथा विष्णु पुराण के अनुसार, वैशालीनगरी की स्थापना इक्ष्वाकु-पुत्र विशाल द्वारा की गई है। विशाल नगरी होने के कारण यह 'विशाला' नाम से भी प्रसिद्ध हुई। बुद्ध काल में इसका विस्तार नौ मील तक था।[2] इसके अतिरिक्त, "वैशाली धन-धान्य-समृद्ध तथा जन-संकुल नगरी थी। इसमें बहुत से उच्च भवन, शिखर-युक्त प्रासाद, उपवन तथा कमल-सरोवर थे (विनयपिटक एवं ललितविस्तर)। बौद्ध एवं जैन—दोनों धर्मों के प्रारम्भिक इतिहास से वैशाली का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। "ई० पू० पाँच सौ वर्ष पूर्व भारत के उत्तर-पूर्व भाग में दो महान् धर्मों के महापुरुषों की पवित्र स्मृतियाँ वैशाली में निहित हैं।"[3] बढ़ती हुई जनसंख्या के दबाव से तीन बार इसका विस्तार हुआ। तीन दीवारें इसे घेरती थीं। तिब्बती विवरण भी इसकी समृद्धि की पुष्टि करते हैं। तिब्बती विवरण (सुल्व ३।८०) के अनुसार, वैशाली में तीन जिले थे। पहले में स्वर्ण-शिखरों से युक्त ७००० घर थे, दूसरे जिले में चाँदी के शिखरों से युक्त १४००० घर थे तथा तीसरे जिले में ताँबे के शिखरों से युक्त २१००० घर थे। इन जिलों में उत्तम, मध्यम तथा निम्न-वर्ग के लोग अपनी-अपनी स्थिति के अनुसार रहते थे। (राकहिल : लाइफ आफ बुद्ध—पृष्ठ ६२)।[4] प्राप्त विवरणों के अनुसार वैशाली की जनसंख्या १६८००० थी।

क्षेत्र एवं निवासी

जहाँ तक इसकी सीमा का सम्बन्ध है, गंगा नदी इसे मगध साम्राज्य से पृथक् करती थी। श्री राय चौधुरी के शब्दों में, "उत्तर दिशा में लिच्छवि-प्रदेश नेपाल तक विस्तृत था।" श्री राहुल सांकृत्यायन के अनुसार, वज्जि-प्रदेश में आधुनिक चम्पारन तथा मुजफ्फरपुर जिलों के कुछ भाग, दरभंगा जिले का अधिकांश भाग, छपरा जिले के मिर्जापुर एवं परसा, सोनपुर पुलिस-क्षेत्र तथा कुछ अन्य स्थान सम्मिलित थे।

बसाढ़ में हुए पुरातत्त्व-विभाग के उत्खनन से इस स्थानीय विश्वास की पुष्टि होती है कि वहाँ राजा विशाल का गढ़ था। एक मुद्रा पर अंकित था—'वेशालि इनु ट—कारे सयानक।' जिसका अर्थ किया गया, "वैशाली का एक भ्रमणकारी अधिकारी।" इस खुदाई में जैन तीर्थंकरों की मध्यकालीन मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई हैं।

वैशाली की जनसंख्या के मुख्य अंग थे—क्षत्रिय। श्री राय चौधुरी के शब्दों में, "कट्टर हिन्दू-धर्म के प्रति उनका मैत्रीभाव प्रकट नहीं होता। इसके विपरीत, ये क्षत्रिय जैन, बौद्ध जैसे अब्राह्मण सम्प्रदायों के प्रबल पोषक थे।" मनुस्मृति के अनुसार, "झल्ल, मल्ल, द्रविड़, खस आदि के समान वे व्रात्य राजन्य थे।"[5] यह सुविदित है कि व्रात्य का अर्थ यहाँ जैन है, क्योंकि जैन साधु एवं श्रावक अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह—इन पाँच व्रतों का पालन करते हैं। मनुस्मृति के उपर्युक्त श्लोक में लिच्छवियों को 'निच्छवि' कहा गया है। कुछ विद्वानों ने लिच्छवियों का 'तिब्बती उद्गम' सिद्ध करने का प्रयत्न किया है परन्तु यह मत स्वीकार्य नहीं है। अन्य विद्वान् के अनुसार लिच्छवि भारतीय क्षत्रिय हैं, यद्यपि यह एक तथ्य है कि लिच्छवि-गणतन्त्र के पतन के बाद वे नेपाल चले गये और वहाँ उन्होंने राजवंश स्थापित किया।[6]

---

१. काम्बोज-सुराष्ट्र क्षत्रिय श्रेण्यादयो वार्ताशास्त्रोपजीविनः लिच्छविक-वृजिक-मल्लक-कुकुर-पांचालादयो राजशब्दोपजीविनः।

२. बी०ए० सालेतोर—ऐन्शियेंट इण्डियन पोलिटिकल थौट एण्ड इन्स्टीट्यूशंस, १९६३, पृ० ५०९.

३. बी०सी० लाः 'हिस्टोरिकल ज्योग्रैफी आफ एन्शियेंट इण्डिया, फाइनेंस' में प्रकाशित (१९५४), पृ० २६६.

४. वही, पृ० २६६-६७.

५. झल्लो मल्लाश्च राजन्याः व्रात्यान्निच्छविरेव च। नटश्च करणश्चौखसो द्रविड एव च ॥१०. २२.

६. भरतसिंह उपाध्याय, वही, ३३१.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'लिच्छवि' शब्द की व्युत्पत्ति

जैन-ग्रन्थों में लिच्छवियों को 'लिच्छई' अथवा 'लिच्छवि' कहा गया है। व्याकरण की दृष्टि से, 'लिच्छवि' शब्द की व्युत्पत्ति 'लिच्छु' शब्द से हुई है। यह किसी वंश का नाम रहा होगा। बौद्ध-ग्रन्थ 'खुद्दकपाठ' (बुद्धघोषकृत) की अट्ठकथा में निम्नलिखित रोचक कथा है—काशी की रानी ने दो जुड़े हुए मांस-पिण्डों को जन्म दिया और उनको गंगा नदी में फिकवा दिया। किसी साधु ने उनको उठा लिया और उनका स्वयं पालन-पोषण किया। वे निच्छवि (त्वचारहित) थे। कालक्रम से उनके अंगों का विकास हुआ और वे बालक-बालिका बन गये। बड़े होने पर वे दूसरे बच्चों को पीड़ित करने लगे, अतः उन्हें दूसरे बालकों से अलग कर दिया गया (वज्जितव्व—वर्जितव्य)। इस प्रकार ये 'वज्जि' नाम से प्रसिद्ध हुए। साधु ने उन दोनों का परस्पर विवाह कर दिया और राजा से ३०० योजन भूमि उनके लिए प्राप्त की। इस प्रकार उनके द्वारा शासित प्रदेश 'वज्जि-प्रदेश' कहलाया।

सात धर्म

मगधराज अजातशत्रु साम्राज्य-विस्तार के लिए लिच्छवियों पर आक्रमण करना चाहता था। उसने अपने मन्त्री वस्सकार (वर्षकार) को बुद्ध के पास भेजते हुए कहा—"हे ब्राह्मण ! भगवान् बुद्ध के पास जाओ और मेरी ओर से उनके चरणों में प्रणाम करो। मेरी ओर से उनके आरोग्य तथा कुशलता के विषय में पूछकर उनसे निवेदन करो कि वैदेही-पुत्र मगधराज अजातशत्रु ने वज्जियों पर आक्रमण का निश्चय किया है और मेरे ये शब्द कहो—'वज्जि-गण चाहे कितने शक्तिशाली हों, मैं उनका उन्मूलन करके पूर्ण विनाश कर दूँगा।' इसके बाद सावधान होकर भगवान् तथागत के वचन सुनो।[1] और आकर मुझे बताओ। तथागत का वचन मिथ्या नहीं होता।"

अजातशत्रु के मन्त्री के वचन सुनकर बुद्ध ने मन्त्री को उत्तर नहीं दिया बल्कि अपने शिष्य आनन्द से कुछ प्रश्न पूछे और तब निम्नलिखित सात अपरिहानीय धर्मों (धम्म) का वर्णन किया[2]—

१. अभिण्हं सन्निपाता सन्निपाता बहुला भविस्संति।
—हे आनन्द ! जब तक वज्जि पूर्ण रूप से निरन्तर परिषदों के आयोजन करते रहेंगे ;

२. समग्गा सन्निपातिस्सति समग्गा वुट्ठ-हिस्संति समग्गा संघकरणीयानि करिस्संति।
—जब तक वज्जि संगठित होकर मिलते रहेंगे, संगठित होकर उन्नति करते रहेंगे तथा संगठित होकर कर्त्तव्य कर्म करते रहेंगे ;

३. अप्पञ्ञत न पञ्ञापेस्संति, पञ्ञतं न समुच्छिन्दिस्संति यथा, पञ्ञत्तेषु सिक्खापदेसु समादाय वत्तिस्संति।
—जब तक वे अप्रज्ञप्त (अस्थापित) विधानों को स्थापित न करेंगे, स्थापित विधानों का उल्लंघन न करेंगे—तथा पूर्व काल में स्थापित प्राचीन वज्जि-विधानों का अनुसरण करते रहेंगे ;

४. ये ते संवपितरो संघपरिणायका ते तक्करिस्संति गुरु करिस्संति मानेस्संति पूजेस्संति तेस च सोत्तब्बं मञ्ञिस्संति।
—जब तक वे वज्जि-पूर्वजों तथा नायकों का सत्कार, सम्मान, पूजा तथा समर्थन करते रहेंगे तथा उनके वचनों को ध्यान से सुनकर मानते रहेंगे ;

---

१. री डेविड्स (अनुवाद) बुद्ध-सुत्त (सेक्रिड-बुक्स आफ ईस्ट, भाग ११—मोतीलाल बनारसीदास, देहली), पृष्ठ २-३-४.
२. पालि-पाठ राधाकुमुद मुखर्जी के ग्रन्थ 'हिन्दू सभ्यता' (अनुवादक—डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल) द्वितीय संस्करण, १९५८, पृ० १९९-२०० से उद्धृत। नियम-संख्या मैंने दी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. ये ते वज्जीनं वज्जिमहल्लका ते सक्करिस्संति, गुरु करिस्सन्ति मानेस्संति पूजेस्संति, या ता कुलित्थियो कुलकुमारियो ता न आक्कस्स पसह्य वास्सेन्ति ।

—जब तक वे वज्जि-कुल की महिलाओं का सम्मान करते रहेंगे और कोई भी कुल-स्त्री या कुल-कुमारी उनके द्वारा बलपूर्वक अपहृत या निरुद्ध नहीं की जायेगी ;

६. वज्जि चेतियानि इब्भंतरानि चेव बाहिरानि च तानि सक्करिस्संति, गुरु करिस्संति, मानेस्संति, पूजेस्संति, तेस च दिन्नपुब्बं, कतपुब्बं धाम्मिकं बलि नो परिहास्संति नो परिहापेस्संति ।

—जब तक वे नगर या नगर से बाहर स्थित चैत्यों (पूजा-स्थानों) का आदर एवं सम्मान करते रहेंगे और पहले दी गई धार्मिक बलि तथा पहले किए गए धार्मिक अनुष्ठानों की अवमानना न करेंगे ;

७. वज्जीनं अरहतेसु धम्मिका रक्खावरण-गुत्ति सुसंविहिता भविस्संति ।

—जब तक वज्जियों द्वारा अरहन्तों को रक्षा, सुरक्षा एवं समर्थन प्रदान किया जायेगा ;
तब तक वज्जियों का पतन नहीं होगा, अपितु उत्थान होता रहेगा ।

आनन्द को इस प्रकार बताने के बाद बुद्ध ने वस्सकार से कहा, "मैंने ये कल्याणकारी सात धर्म वज्जियों को वैशाली में बताये थे ।" इस पर वस्सकार ने बुद्ध से कहा, "हे गौतम ! इस प्रकार मगधराज वज्जियों को युद्ध में तब तक नहीं जीत सकते, जब तक वह कूटनीति द्वारा उनके संगठन को न तोड़ दें ।" बुद्ध ने उत्तर दिया, "तुम्हारा विचार ठीक है ।" इसके बाद वह मन्त्री चला गया ।

वस्सकार के जाने पर बुद्ध ने आनन्द से कहा—"राजगृह के निकट रहने वाले सब भिक्षुओं को इकट्ठा करो ।" तब उन्होंने भिक्षु-संघ के लिए निम्नलिखित सात धर्मों का विधान किया—

१. हे भिक्षुओ ! जब तक भिक्षुगण पूर्ण रूप से निरन्तर परिषदों में मिलते रहेंगे ;

२. जब तक वे संगठित होकर मिलते रहेंगे, उन्नति करते रहेंगे तथा संघ के कर्त्तव्यों का पालन करते रहेंगे ;

३. जब तक वे किसी ऐसे विधान को स्थापित नहीं करेंगे जिसकी स्थापना पहले न हुई हो, स्थापित विधानों का उल्लंघन नहीं करेंगे तथा संघ के विधानों का अनुसरण करेंगे ;

४. जब तक वे संघ के अनुभवी गुरुओं, पिता तथा नायकों का सम्मान तथा समर्थन करते रहेंगे तथा उनके वचनों को ध्यान से सुनकर मानते रहेंगे ;

५. जब तक वे उस लोभ के वशीभूत न होंगे जो उनमें उत्पन्न होकर दुःख का कारण बनता है ;

६. जब तक वे संयमित जीवन में आनन्द का अनुभव करेंगे ;

७. जब तक वे अपने मन को इस प्रकार संयमित करेंगे जिससे पवित्र एवं उत्तम पुरुष उनके पास आयें और आकर सुख-शान्ति प्राप्त करें ;

तब तक भिक्षु-संघ का पतन नहीं होगा, उत्थान ही होगा । जब तक भिक्षुओं में ये सात धर्म विद्यमान हैं, जब तक वे इन धर्मों में भली-भाँति दीक्षित हैं, तब तक उनकी उन्नति होती रहेगी ।

महापरिनिब्बान सुत्त के उपर्युक्त उद्धरण से वैशाली-गणतन्त्र की उत्तम व्यवस्था एवं अनुशासन की पुष्टि होती है । वैशाली के लिए विहित सात धर्मों को (कुछ परिवर्तित करके) बुद्ध ने अपने संघ के लिए भी अपनाया, इससे स्पष्ट है कि २६०० वर्ष पूर्व के प्राचीन गणतन्त्रों में वैशाली गणतन्त्र श्रेष्ठ तथा योग्यतम था ।

लिच्छवियों के कुछ अन्य गुणों ने उन्हें महान् बनाया । उनके जीवन में आत्म-संयम की भावना थी ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'लकड़ी के तख्त पर सोते थे, सदैव कर्त्तव्यनिष्ठ रहते थे। जब तक उनमें ये गुण रहे, अजातशत्रु उनका बाल बाँका भी न कर सका।[1]

शासन-प्रणाली

लिच्छवियों के मुख्य अधिकारी थे—राजा, उपराजा, सेनापति तथा भाण्डागारिक। इनमें से ही सम्भवतः मन्त्रिमण्डल की रचना होती थी। केन्द्रीय संसद का अधिवेशन नगर के मध्य स्थित सन्थागार (सभा-भवन) में होता था। शासन-शक्ति संसद के ७७०७ सदस्यों (राजा नाम से युक्त) में निहित थी।[2] सम्भवतः इनमें से कुछ राजा उग्र थे और एक दूसरे की बात नहीं सुनते थे। इसी कारण ललितविस्तर-काव्य में ऐसे राजाओं की मानो भर्त्सना की गई है—"इन वैशालिकों में उच्च, मध्य, वृद्ध एवं ज्येष्ठजनों के सम्मान के नियम का पालन नहीं होता। प्रत्येक स्वयं को 'राजा' समझता है। 'मैं राजा हूँ! मैं राजा हूँ!' कोई किसी का अनुयायी नहीं बनता।"[3] इस उद्धरण से स्पष्ट है कि कुछ महत्त्वाकांक्षी सदस्य गणराजा (अध्यक्ष) बनने के इच्छुक थे।

संसत्सदस्यों की इतनी बड़ी संख्या से कुछ विद्वानों का अनुमान है कि वैशाली की सत्ता कुछ कुलों (७७०७) में निहित थी और इसे केवल 'कुल-तन्त्र' कहा जा सकता है। इस मान्यता का आधार यह तथ्य है कि ७७०७, राजाओं का अभिषेक एक विशेषतया सुरक्षित सरोवर (पुष्करिणी) में होता था।[4] स्वर्गीय प्रो० आर० डी० भण्डारकर का निष्कर्ष था—"यह निश्चित है कि वैशाली संघ के अंगीभूत कुछ कुलों का महासंघ ही यह गणराज्य था।" श्री जायसवाल तथा श्री अल्तेकर जैसे राजशास्त्रविद इस निष्कर्ष से सहमत नहीं हैं। श्री जायसवाल ने 'हिन्दू राजशास्त्र' (पृ० ४४) में लिखा है—"इस साक्ष्य से उन्हें 'कुल' शब्द से सम्बोधित करना आवश्यक नहीं। छठी शताब्दी ई० पू० के भारतीय गणतन्त्र बहुत पहले समाज के जन-जातीय स्तर से गुजर चुके थे। ये राज्य, गण और संघ थे, यद्यपि इनमें से कुछ का आधार राष्ट्र या जनजाति था; जैसाकि प्रत्येक राज्य-प्राचीन या आधुनिक का होता है।"

डॉ० ए० एस० अल्तेकर का यह उद्धरण विशेषतः दृष्टव्य है—"यह स्वीकार्य है कि यौधेय, शाक्य, मालव तथा लिच्छवि गणराज्य आज के अर्थों में लोकतन्त्र नहीं थे। अधिकांश आधुनिक विकसित लोकतन्त्रों के समान सर्वोच्च एवं सार्वभौम शक्ति समस्त वयस्क नागरिकों की संस्था में निहित नहीं थी। फिर भी इन राज्यों को हम गणराज्य कह सकते हैं।....स्पार्टा, ऐथेन्स, रोम, मध्य-युगीन वेनिस, संयुक्त नीदरलैण्ड और पोलैण्ड को 'गणराज्य' कहा जाता है; यद्यपि इनमें से किसी में पूर्ण लोकतन्त्र नहीं था। इस सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि तथा ऐतिहासिक साक्ष्य के आधार पर निश्चय ही प्राचीन भारतीय गणराज्यों को उन्हीं अर्थों में गणराज्य कहा जा सकता है जिस अर्थ में यूनान तथा रोम

---

१. देखिए श्री भरतसिंह उपाध्याय-कृत बुद्ध कालीन भारतीय भूगोल (पृ० ३८५-८६) का निम्नलिखित उद्धरण (संयुत्तनिकाय पृ० ३०८ से उद्धृत)—"भिक्षुओ! लिच्छवि लकड़ी के बने तख्ते पर सोते हैं। अप्रमत्त हो, उत्साह के साथ अपने कर्त्तव्य को पूरा करते हैं। मगधराज वैदेही-पुत्र अजातशत्रु उनके विरुद्ध कोई दाव-पेंच नहीं पा रहा है। भिक्षुओं! भविष्य में लिच्छवि लोग बड़े सुकुमार और कोमल हाथ-पैर वाले हो जायेंगे। वे गद्देदार बिछावन पर गुलगुले तकिए लगाकर दिन-चढ़े तक सोये रहेंगे। तब मगधराज वैदेही-पुत्र अजातशत्रु को उनके विरुद्ध दाँव-पेंच मिल जायेगा।

२. तस्य निचकालं रज्जं कारेत्वा वसंमानं येव राजन सतसहस्सानि सतसतानि तत्र च। राजानो होंति तत्तका, ये व उपराजाओं तत्तका, सेनापतिनो तत्तका, तत्तका भंडागारिका। J. I. S. O. 4.

३. नोच्च-मध्य-वृद्ध-ज्येष्ठानुपालिता, एकैक एव मन्यते अहं राजा, अहं राजेति, न च कस्यच्छिष्यत्वमुपगच्छति।

४. वैशाली-नगरे गणराजकुलानां अभिषेकमंगलपोखरिणी।—जातक, ४।१४८.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के प्राचीन राज्यों को गणराज्य कहा जाता है। इन राज्यों में सार्वभौम सत्ता किसी एक व्यक्ति या अल्पसंख्यक वर्ग को न मिलकर बहु-संख्यक वर्ग को प्राप्त थी।"[1]

महाभारत में भी 'प्रत्येक घर में राजा' होने का वर्णन है।[2] उपर्युक्त विद्वान् के मतानुसार, इस वर्णन में छोटे गणराज्यों की तथा उन क्षत्रिय कुलों की चर्चा है जिन्होंने उपनिवेश स्थापित करके राजपद प्राप्त किया था। संयुक्त राज्य अमरीका में मूल उपनिवेश स्थापकों को नवागन्तुकों की अपेक्षा कुछ विशेषाधिकार प्राप्त थे।

'मलाबार गजटियर' के आधार पर श्री अम्बिकाप्रसाद बाजपेयी ने 'नय्यरों के एक संघ' की ओर ध्यान आकर्षित किया है जिसमें ६००० प्रतिनिधि थे। वे केरल की संसद के समान थे।[3] बौद्ध-साहित्य से ज्ञात होता है कि राजा बिम्बिसार श्रेणिक के अस्सी हजार गामिक (ग्रामिक) थे। इसी सादृश्य पर अनुमान किया जा सकता है कि ७७०७, राजा विभिन्न क्षेत्रों (या निर्वाचन-क्षेत्रों) के उसी रूप में स्वतन्त्र संचालक थे जिस प्रकार देशी रियासतों के जागीरदार राजा के आधीन होकर भी अपनी निजी पुलिस की तथा अन्य व्यवस्थाएँ करते थे।

वैदेशिक सम्बन्ध

लिच्छवियों के वैदेशिक सम्बन्धों का नियन्त्रण नौ सदस्यों की परिषद् द्वारा होता था। इनका वर्णन बौद्ध एवं जैन साहित्य में 'नव लिच्छवि' के रूप में किया गया है। अजातशत्रु के आक्रमण के मुकाबले के लिए इन्हें पड़ौसी राज्यों नवमल्ल तथा अष्टादश काशी कौशल के साथ मिलकर महासंघ बनाना पड़ा। उन्होंने अपने सन्देश के लिए दूत नियुक्त किए (वेशालिकानां लिच्छविनां वचनेन)।

न्याय-व्यवस्था

न्याय-व्यवस्था अष्टकुल सभा के हाथ में थी। श्री जायसवाल ने 'हिन्दू राजशास्त्र' (पृ० ४३-४७) में इनकी न्याय-प्रक्रिया का निम्नलिखित वर्णन किया है—विभिन्न प्रकरणों (पवे-पट्ठकान) पर गणराजा के निर्णयों का विवरण सावधानीपूर्वक रखा जाता था जिनमें अपराधी नागरिकों के अपराधों तथा उनके दिए गए दण्डों का विवरण अंकित होता था। विनिश्चय महामात्र (न्यायालयों) द्वारा प्रारम्भिक जाँच की जाती थी (ये साधारण अपराधों तथा दीवानी प्रकरणों के लिए नियमित न्यायालय थे)। अपील-न्यायालयों के अध्यक्ष थे—वोहारिक (व्यवहारिक)। उच्च-न्यायालय के न्यायाधीश 'सूत्रधार' कहलाते हैं। अन्तिम अपील के लिए 'अष्ट-कुलक' होते थे। इनमें से किसी भी न्यायालय द्वारा नागरिकों को निरपराध घोषित करके मुक्त किया जा सकता था। यदि सभी न्यायालय किसी को अपराधी ठहराते तो मन्त्रिमण्डल का निर्णय अन्तिम होता था।

विधायिका

लिच्छवियों के संसदीय विचार-विमर्श का कोई प्रत्यक्ष प्रमाण प्राप्त नहीं होता, परन्तु विद्वानों ने चुल्लवग्ग एवं विनय-पिटक के विवरणों से इस विषय में अनुमान लगाए हैं। जब कौशलराज ने शाक्य-राजधानी पर आक्रमण किया और उनसे आत्म-समर्पण के लिए कहा तो शाक्यों द्वारा इस विषय पर मतदान किया गया। मत-पत्र को 'छन्दस्' एवं कोरम को 'गणपूरक' तथा आसनों के व्यवस्थापक को 'आसन-प्रज्ञापन' कहा जाता था। गणपूरक के अभाव में अधिवेशन अनियमित समझा जाता था। विचारार्थ प्रस्ताव की प्रस्तुति को 'ज्ञप्ति' कहा जाता था। संघ से तीन-चार बार पूछा जाता था कि क्या संघ प्रस्ताव से सहमत है। संघ के मौन का अर्थ सहमति या स्वीकृति समझा जाता

---

१. डॉ० ए० एस० अल्तेकर—प्राचीन भारत में राज्य एवं शासन (१९५८), पृ० ११२-१३.
२. गृहे-गृहे तु राजानः—महाभारत, २।१५।२.
३. अम्बिकाप्रसाद बाजपेयी, हिन्दू राज्यशास्त्र, पृ० १०४.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

था। बहुमत द्वारा स्वीकृत निर्णय को 'ये भुय्यसिकम्' (बहुत की इच्छानुसार) कहा जाता था। मत-पत्रों को 'शलाका' तथा मत-पत्र गणक को 'शलाका-ग्राहक' कहा जाता था। अप्रासंगिक तथा अनर्थक भाषणों की शिकायत भी की जाती थी।

श्री जायसवाल के मतानुसार—"सुदूर अतीत (छठी शताब्दी ई० पू०) से गृहीत इस विचारधारा से 'एक उच्चतः' विकसित अवस्था की विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं। इसमें भाषा की पारिभाषिकता एवं औपचारिकता विधि एवं संविधान की अन्तर्निहित धारणाएँ उच्च स्तर की प्रतीत होती हैं। इसमें शताब्दियों से प्राप्त पूर्व अनुभव भी सिद्ध होता है। ज्ञप्ति, प्रतिज्ञा, गणपूरक, शलाका, बहुमत प्रणाली आदि शब्दों का उल्लेख, किसी प्रकार की परिभाषा के बिना किया गया है, जिससे इनका पूर्व प्रचलन सिद्ध होता है।"

वैशाली-गणतन्त्र का अन्त

वैशाली-गणतन्त्र पर मगधराज अजातशत्रु का आक्रमण इस पर घातक प्रहार था। अजातशत्रु की माता चेलना वैशाली के गणराजा चेटक की पुत्री थी, तथापि साम्राज्य विस्तार की उसकी आकांक्षा ने वैशाली का अन्त कर दिया। बुद्ध से भेंट के बाद मन्त्री वस्सकार को अजातशत्रु द्वारा वैशाली में भेजा गया। वह मन्त्री वैशाली के लोगों में मिलकर रहा और उसने उसमें फूट के बीज बो दिये। व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं तथा फूट से इतने महान् गणराज्य का विनाश हुआ। 'महाभारत' में भी गणतन्त्रों के विनाश के लिए ऐसे ही कारण बताए हैं। भीष्म पितामह ने युधिष्ठिर से कहा, "हे राजन्! हे भरतर्षभ! गणों एवं राजकुलों में शत्रुता की उत्पत्ति के मूल कारण हैं—लोभ एवं ईर्ष्या-द्वेष। कोई (गण या कुल) लोभ के वशीभूत होता है, तब ईर्ष्या का जन्म होता है और दोनों के कारण पारस्परिक विनाश होता है।"

वैशाली पर आक्रमण के अनेक कारण बताये गये हैं। एक जैन कथानक के अनुसार, सेयागम (सेचानक) नामक हाथी द्वारा पहना गया १८ शृंखलाओं का हार इसका मूल कारण था। बिम्बसार ने इसे अपने एक पुत्र वेहल्ल को दिया था परन्तु अजातशत्रु इसे हड़पना चाहता था। वेहल्ल हाथी और हार के साथ अपने नाना चेटक के पास भाग गया। कुछ लोगों के अनुसार, रत्नों की एक खानि ने अजातशत्रु को आक्रमण के लिए ललचाया। यह भी कहा जाता है कि मगध-साम्राज्य तथा वैशाली गणराज्य की सीमा गंगा-तट पर चुंगी के विभाजन के प्रश्न पर झगड़ा हो गया। अस्तु, जो भी कारण हो, इतना निश्चित है कि अजातशत्रु ने इसके लिए बहुत समय से बड़ी तैयारियाँ की थीं। सर्वप्रथम उसने गंगा-तट पर पाटलिपुत्र (आधुनिक पटना) की स्थापना की। जैन विवरणों के अनुसार, यह युद्ध सोलह वर्षों तक चला, अन्त में वैशाली-गणतन्त्र मगध साम्राज्य का अंग बन गया।

क्या वैशाली गणराज्य के पतन के बाद लिच्छवियों का प्रभाव समाप्त हो गया? इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक हो सकता है, परन्तु श्री सालेतोर (वही, पृ० ५०८) के अनुसार "बौद्ध साहित्य में इनका सबसे अधिक उल्लेख हुआ है, क्योंकि इतिहास में एक हजार वर्षों से अधिक समय तक इनकी भूमिका महत्त्वपूर्ण रही।" श्री रे चौधुरी के अनुसार, "ये नैपाल में ७वीं शताब्दी में क्रियाशील रहे। गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त, 'लिच्छवि-दोहित्र' कहलाने में गौरव का अनुभव करते थे।"

२५०० वर्ष पूर्व महावीर-निर्वाण के अनन्तर, नवमल्लों एवं लिच्छवियों ने प्रकाशोत्सव तथा दीपमालिका का आयोजन किया और तभी से शताब्दियों से जैन इस पुनीत पर्व को 'दीपावली' के रूप में मानते हैं। कल्प-सूत्र के शब्दों में, "जिस रात भगवान् महावीर ने मोक्ष प्राप्त किया, सभी प्राणी दुःखों से मुक्त हो गये। काशी-कौशल के अठारह संघीय राजाओं, नव मल्लों तथा नव लिच्छवियों ने चन्द्रोदय (द्वितीया) के दिन प्रकाशोत्सव आयोजित किया; क्योंकि उन्होंने कहा—'ज्ञान की ज्योति बुझ गई है, हम भौतिक प्रकाश से संसार को आलोकित करें'।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५००वें महावीर-निर्वाणोत्सव के सन्दर्भ में आधुनिक भारत वैशाली से प्रेरणा प्राप्त कर सकता है। अनेक सांस्कृतिक कार्य-कलाप वैशाली पर केन्द्रित हैं। इसी को दृष्टिगत करके राष्ट्रकवि स्व० श्री रामधारीसिंह दिनकर ने वैशाली के प्रति श्रद्धांजलि निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत की है—

वैशाली जन का प्रतिपालक, गण का आदि विधाता।
जिसे ढूंढ़ता देश आज, उस प्रजातन्त्र की माता॥
रुको एक क्षण, पथिक! यहाँ मिट्टी को सीस नवाओ।
राज-सिद्धियों की सम्पत्ति पर, फूल चढ़ाते जाओ।

□

××××××××

एवं लोभः क्षोभदः स्पष्टमेव,
नानारूपः प्राणिनां वर्ततेऽत्र।
किं तत्पापं यन्न जायेत लोभाद्,
दुस्त्याज्योऽयं सर्वथानर्थकारी॥

—वर्द्धमान शिक्षा सप्तशती
(श्री चन्दन मुनि विरचित)

लोभ संसार में प्राणियों को क्षुब्ध करता रहता है। वह कौनसा पाप है, जो लोभ से उत्पन्न नहीं होता? अर्थात् सभी पाप लोभ उत्पन्न होते हैं। लोभ सदा ही अनर्थ करता है। किन्तु इसे छोड़ना बहुत ही कठिन है।

××××××××

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org